यह मछली नीली क्यों है?

नवोदिता जैन और स्वागता घोष

एक रहस्यमई नीले प्रोटीन के नवीन गुणधर्म की आकस्मिक खोज से उस सवाल का जवाब मिला जो दो दशकों से एक मत्सय जीवविज्ञानी को मथे जा रहा था। यह कहानी है वेन शेफ़र और एक अवलोकन के पीछे पड़ जाने की उनकी लगन की – पीली मछलियों के लिए प्रसिद्ध एक झील में नीली मछली का मिलना।

उत्तर-पूर्वी अमरीका और कनाडा (द ग्रेट लेक्स रीजन) में बड़ी तादाद में झीलों का होना इन इलाक़ों में मन-बहलाव के मत्स्याखेट की लोकप्रियता की व्याख्या कर देता है (**देखें चित्र-1**)। कभी-कभी, पैनी नज़रों वाला कोई व्यक्ति जब मछली पकड़ने जाता

चित्र-1 : नॉर्थ अमरीका और कनाडा का ग्रेट लेक इलाक़ा। Credits: Jonnie Nord – U.S. Army Corps of Engineers, Detroit District, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Great_Lakes_1.PNG. License: Public Domain.

चित्र-2 : पीली वॉलआई

(क) मछली

Credits: Engbretson, Eric / U.S. Fish and Wildlife Service, Wikimedia Commons. URL: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Sander_vitreus.jpg. License: CC-BY.

(ख) शुभंकर वॉली

Credits: Counselman Collection, Flickr. URL: https://www.flickr.com/photos/counselman/14504597100. License: CC BY-SA 2.0.

है, तो हो सकता है कि वह किसी वैज्ञानिक खोज के साथ लौटे। यह एक ऐसी ही कहानी है – एक तेज़ नज़र वाले मच्छीमार, वेन शेफ़र की।

यूनिवर्सिटी ऑफ़ विस्कॉन्सिन, यूएस के एमेरिटस प्रोफ़ेसर शेफ़र एक मत्स्य जीवविज्ञानी हैं। उनकी ख़ास रुचि *सैंडर विट्रीयस* या पीली वॉलआई नामक प्रजाति में है (**देखें चित्र-2 क**)। पिछले 25 सालों से हर साल शेफ़र अपने ओंटारियो, कनाडा स्थित कैबिन में जाते हैं – इन मछलियों का उनके प्राकृतिक आवास में अध्ययन करने।

वॉलआई क्या है?

ऐसा माना जाता है कि इस मछली को यह विचित्र-नाम इस तथ्य से मिला कि इसकी आँखें अपारदर्शी और शीशे के समान होती हैं। कनाडा (और उत्तर अमरीका) की देशज वॉलआई इस इलाक़े का एक लज़ीज़ व्यंजन है। लगभग 76 सेमी लम्बी और क़रीब 9 किलो वज़नी यह मछली वाक़ई एक सुनहरा शिकार होती है! मज़ेदार बात है कि वॉली नाम की एक वॉलआई, ओहायो, यूएस की आइस हॉकी टीम टोलेडो वॉलीज़ की शुभंकर है (**देखें चित्र-2 ख**)।

"देखो! मेरी पकड़ में एक नीली वॉलआई आई है!"

1992 की गर्मियों में कुछ अजीब घटा – वेन ने एक मछली पकड़ी जो नीले शल्कों वाली एक नई प्रजाति लग रही थी (**देखें चित्र-3 क**)। लेकिन मछली को हाथ में लेते ही उन्होंने पाया कि नीला रंग श्लेष्मा जैसे उस पदार्थ का था जो रगड़ने पर उनकी हथेलियों पर लग गया था (**देखें चित्र-3 ख**) और पीछे छूट गई इस्पाती धूसर रंग की मछली जो साफ़तौर पर पीली वॉलआई जैसी दिख रही थी। वेन की प्रखर जिज्ञासा न होती, तो कहानी यहीं ख़त्म हो सकती थी। उन झीलों में मत्स्याखेट के अपने तजुर्बे के चलते वेन ने अपने शिकार को एक वॉलआई के रूप में पहचान लिया। प्रयोगशाला में लौटकर उन्होंने डीएनए अध्ययनों के द्वारा अपने इस निष्कर्ष की पुष्टि की। लेकिन सवाल यह था कि नीले रंग का वह पदार्थ क्या था? वह वहाँ क्यों कर था? क्या यह एकबारगी होने वाली घटना थी? वेन के अन्दर के वैज्ञानिक के लिए ऐसा असंगत अवलोकन एक ज़बरदस्त चुनौती था।

जब उसी इलाक़े के शौक़िया व पेशेवर दोनों तरह के बंसीबाज़, यहाँ नीली वॉलआई दिखने की बात कहने लगे तब जाकर वेन को समझ आया कि यह कोई बिरली घटना नहीं थी। उनके आगामी मत्स्याखेट अभियानों में उन्हें ऐसी मछलियाँ लगातार मिलती रहीं। साल 2006 में वेन ने अपनी वॉलआई जानकारी को संकलित कर एक ऑनलाइन डाटाबेस बनाने की ठानी। इसके बाद उन्होंने अन्य लोगों को भी आमंत्रित किया कि वे अपने अवलोकनों का ब्योरा इस डाटाबेस में जोड़ें और साथ ही उनसे आग्रह किया कि वे अपने द्वारा एकत्रित श्लेष्मा के नमूने भी उन्हें भेजें। तमाम रिकॉर्डों को देखने पर वेन

चित्र-3 : नीली वॉलआई

चित्र-3 क : नीली वॉलआई बरअक्स पीली वॉलआई

Credits: © Canadian Science Publishing or its licensors. URL: http://www.nrcresearchpress.com/doi/full/10.1139/cjfas-2014-0139#.WyoKe1OFN-U. License: CC-BY 4.0.

चित्र-3 ख : हथेलियों पर लगा श्लेष्मा

Credits: Gary Skrezk, Walleye Heaven. URL: https://www.walleyeheaven.com/bluewalleye/bluewalleye4.png. License: Obtained with permission from the rights owner.

और उनके समूह को दो दिलचस्प पैटर्न मिले – नीली वॉलआई देखे जाने की ज़्यादातर घटनाएँ गर्मी के दिनों (जून-अगस्त) की थीं और उनमें से एक भी नमूना यूएस के मिनेसोटा या विस्कॉन्सिन राज्यों की झीलों से नहीं था। वेन और उनकी रिसर्च टीम द्वारा 16 सालों तक किए गए ज़मीनी अवलोकनों से इन पैटर्नों की पुष्टि हुई। तथ्यों के इन समान्तर स्रोतों के आधार पर वेन इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि नीली वॉलआई 45 डिग्री उत्तर अक्षांश में पाई गई हैं, इसीलिए वे सिर्फ़ कनाडा की तरफ़ वाली झीलों में ही पाई जाती हैं।

वेन की टीम ने मछली की सतह से छूटकर हाथ पर लगे श्लेष्मा के विभिन्न नमूनों का विश्लेषण करना जारी रखा और वे इसकी व्याख्या करने वाली कई परिकल्पनाओं तक पहुँचे। इनमें से एक परिकल्पना ने नीले रंग का कारण इस इलाक़े के पानी की अम्लता को बताया। एक और परिकल्पना थी कि यह श्लेष्मा मछली की त्वचा पर विकसित हो रहे शैवाल या बैक्टीरिया की वजह से हो सकती है। अन्ततः विशेषज्ञ रसायनज्ञों के सहयोग से वेन उस विशिष्ट पदार्थ को अलग कर पाए जिसके चलते श्लेष्मा को उसकी नीली आभा मिलती थी। इस पदार्थ की प्रकृति प्रोटीनी पाई गई, जिसके चलते यह सम्भावना ख़ारिज हो गई कि यह मछली की त्वचा पर बसर करने वाले कोई बैक्टीरिया या शैवाल हैं।

रहस्यमय नीला प्रोटीन

मछली की ही तरह नीले प्रोटीन की अपनी दास्तान भी कुछ कम दिलचस्प नहीं। विस्तृत रासायनिक अध्ययनों के बाद वेन और उनके सहयोगियों ने पाया कि इसका नीला रंग प्रोटीन-क्रोमोफ़ोर संकुल से आता है। यह प्रोटीन सिर्फ़ इस मछली में ही पाया गया, सो इसका नाम संडरसायनिन रखा गया। पता चला कि यह क्रोमोफ़ोर दरअसल बिलिवर्डिन है जो कई प्रजातियों में संरक्षित रहा है। बिलिवर्डिन लाल रक्त कोशिकाओं में हीमोग्लोबिन के पुनर्चक्रण के दौरान हीम के टूटने से बनता है। नीली मछली के पाए जाने के पैटर्न के चलते यह सवाल उठा – प्रोटीन-क्रोमोफ़ोर संकुल का उत्पादन सिर्फ़ गर्मियों में और केवल कनाडा की झीलों में पाई जाने वाली वॉलआई मछलियों में ही क्यों होता है?

इस पहेली के हल का एक हिस्सा हाईस्कूल के एक विद्यार्थी से मिला जिसने दिखाया कि 45 डिग्री अक्षांश से ऊपर के क्षेत्रों को गर्मी के दिनों में असामान्य रूप से ऊँची मात्रा में पराबैंगनी विकिरण मिलता है। दक्षिणी स्वीडन के एक अध्ययन में भी 55 डिग्री अक्षांश के ऊपरी इलाक़ों में गर्मियों के दौरान पराबैंगनी रेडिएशन में ऐसी ही बढ़ोतरी रिकॉर्ड की गई थी। इस अध्ययन के शोधकर्ताओं ने इस बढ़ोतरी का कारण ध्रुवों के निकट ओज़ोन की मात्रा में मौसमी कमी को बताया। हल का दूसरा हिस्सा बिलिवर्डिन के संश्लेषण सम्बन्धी अध्ययनों से आया। आमतौर पर हीम का विघटन एंज़ाइमों की मध्यस्थता से होता है, लेकिन पराबैंगनी विकिरण पड़ने पर भी होता है। इस महत्त्वपूर्ण जानकारी के बल पर वेन और उनके सहकर्मी इस परिकल्पना के क़रीब आते दिखे – कनाडा की झीलों में पराबैंगनी विकिरण की ऊँची मात्रा के चलते हीम का टूटना बढ़ रहा होगा। जिसके नतीजतन, हो सकता है कि संडरसायनिन-बिलिवर्डिन संकुल यानी नीली श्लेष्मा का उत्पादन बढ़ता होगा। पहेली का अन्तिम हिस्सा संयोग से

चित्र-4 : प्रतिदीप्ति सूक्ष्मदर्शी से देखने पर नीली श्लेष्मा

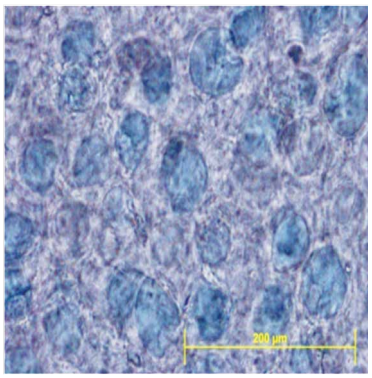

(क) सफ़ेद प्रकाश में देखने पर

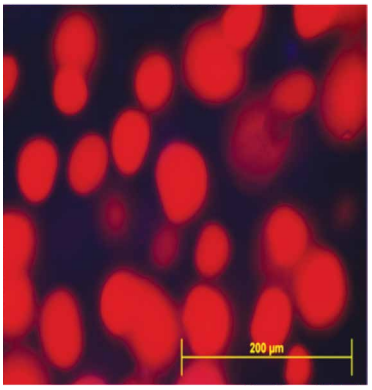

(ख) पराबैंगनी प्रकाश में देखने पर

Credits: Ghosh S et al ©National Academy of Science. URL: http://www.pnas.org/content/113/41/11513. License: CC BY-NC-ND.

घटा। वेन को उनके एक सहयोगी ने सुझाया कि वेन नीली श्लेष्मा को एक ब्राइट-फील्ड (सफ़ेद प्रकाश) सूक्ष्मदर्शी से देखें। ऐसा करने पर वेन को आश्चर्यजनक रूप से नमूने में अनेक चटख लाल रंग के धब्बे दिखे। यह सुनकर उस सहयोगी ने वेन से पूछा, "क्या आपको यक़ीन है कि आपतित प्रकाश वाक़ई सफ़ेद था।" यह सवाल सुनते ही वेन का माथा ठनका कि वे अब तक उस नमूने को एक प्रतिदीप्ति (फ्लोरेसेंस) सूक्ष्मदर्शी में पराबैंगनी (तरंग लम्बाई क़रीब 375) प्रकाश में देख रहे थे। उत्साहित होकर उन्होंने नमूने को पहले सफ़ेद प्रकाश से और फिर पराबैंगनी प्रकाश से आलोकित किया। ऐसा करने पर हर बार उन्हें नतीजा वही मिला। सफ़ेद प्रकाश में नमूना लगभग समान रूप से नीला दिखा (**देखें चित्र-4 क**) लेकिन पराबैंगनी प्रकाश में देखने पर उसमें सुर्ख़ लाल रंग के धब्बे दिखे (**देखें चित्र-4 ख**)। श्लेष्मा का कोई घटक पराबैंगनी प्रकाश (तरंग लम्बाई अपेक्षाकृत कम) को सोखने और लाल प्रकाश (तरंग लम्बाई अपेक्षाकृत अधिक) को उत्सर्जित करने की क्षमता रखता था। दूसरे शब्दों में, वह प्रतिदीप्ति दर्शाता था। वेन ने अनुमान लगाया कि यह चमकीला घटक संडरसायनिन था। इसकी पुष्टि हुई जब वे और उनके एक सहयोगी एस. रामास्वामी इस प्रोटीन को पृथक करने में कामयाब हुए।

स्वाभाविक रूप से अगला सवाल उठ गया – क्या श्लेष्मा महज़ एक मौसमी प्रतिक्रिया थी? या इसके चलते उस नीली मछली को जीवित रहने में कुछ मदद भी मिलती है? संडरसायनिन द्वारा पराबैंगनी प्रकाश को सोखने की क्षमता की संयोगवश हुई खोज ने इस रहस्य के कुछ सुराग़ दिए। चूँकि वेन पीली और नीली वॉलआई के बीच कोई जीनोमिक अन्तर नहीं खोज पाए, सो उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि नीली श्लेष्मा एक मौसमी 'अनुकूलन' हो सकता है। हो सकता है कि सतह पर पराबैंगनी विकिरण को सोखकर श्लेष्मा का संडरसायनिन-बिलिवर्डिन संकुल अन्दरूनी ऊतकों को इसके नुक़सानदेह प्रभावों से बचा रहा हो। रामास्वामी एक और सम्भावित लाभ की ओर इशारा करते हैं।

चूँकि पानी अपेक्षाकृत अधिक तरंग-लम्बाई का प्रकाश सोखता है, सो केवल कमतर तरंग-लम्बाइयों वाला प्रकाश (नीला और पराबैंगनी) ही गहरे पानी में पहुँच पाता है। गहरे पानी में रहने वाली मछलियों में चीज़ों को उनके द्वारा परावर्तित पराबैंगनी प्रकाश में 'देखने' की क्षमता (पराबैंगनी दृष्टि) विकसित हुई है, जो एक अनुकूलन है। कनाडा की झीलों में वॉलआई की प्राकृतिक शिकारी, पाइक (बड़े तेज़ दाँत वाली विशाल मछली), शिकार को देखने के लिए पराबैंगनी दृष्टि पर भरोसा करती है। अपने मौसमी अनुकूलन के चलते नीली वॉलआई पराबैंगनी को परावर्तित करने की बजाय उसे सोखती हैं। इस प्रकार नीली श्लेष्मा एक अदर्शन आवरण (invisibility cloak) की तरह काम करती है और मछली को उसके प्रमुख शिकारियों की नज़रों में अदृश्य बना देती है! लेकिन वॉलआई ख़ुद भी गहरे पानी में रहती है और पराबैंगनी दृष्टि से देखती है। तो फिर इसका मतलब क्या यह हुआ कि नीली वॉलआई न सिर्फ़ पाइक्स के लिए अदृश्य बनती हैं, बल्कि अपने सम्भावित यौन–जोड़ीदार के लिए भी अदृश्य हो जाती हैं? रामास्वामी का मानना है कि वॉलआई में बाहरी निषेचन के चलते सम्भोग-साथी के लिए 'दृश्यमान होने' की ज़रूरत ही नहीं रह जाती है।

इस प्रोटीन की उपयोगिता केवल मछलियों के लिए ही नहीं है। रामास्वामी की प्रयोगशाला की एक रिसर्चर स्वागता, उस टीम की एक सदस्य थीं जिसने संडरसायनिन के प्रतिदीप्ति गुण का विस्तृत अध्ययन किया था। इस टीम ने पाया कि संडरसायनिन साइज़ में काफी छोटा होता है – शायद अब तक ज्ञात सबसे छोटा लाल प्रतिदीप्त प्रोटीन। लेकिन अपनी अनोखी रासायनिक प्रकृति के चलते यह लम्बे समय तक चमकता रह सकता है। इन दो गुणधर्मों को ध्यान में रख स्वागता रिसर्च और रोग निदान में एक प्रतिदीप्त पहचान लेबल के तौर पर संडरसायनिन की भूमिका की पड़ताल करना चाहती हैं। इसमें संडरसायनिन जीन के कोडिंग क्षेत्रों की पहचान और अन्य जीवों की जीवित कोशिकाओं व ऊतकों में इसे रोपित करना शामिल होगा ताकि इनकी गतिविधियों पर रिअल-टाइम नज़र रखी जा सके।

निष्कर्ष

कुछ मछलियाँ क्यों पीली नहीं बल्कि नीली दिखती हैं, इस जिज्ञासु-चिंगारी के चलते वैज्ञानिक अनुसन्धान की एक लम्बी प्रक्रिया शुरू हुई। इस समूची प्रक्रिया में विभिन्न विषयों के अनेक वैज्ञानिक व कनाडा के 'ग्रेट लेक क्षेत्र' के मत्स्याखेट रसिक

शामिल हुए। इसके चलते एक नए प्रतिदीप्त प्रोटीन की 'संयोगी' खोज भी हुई। अब इस नए प्रतिदीप्त प्रोटीन का अध्ययन किया जा रहा है ताकि शोध व नैदानिकी में इसके उपयोग के द्वारा जीवन के अन्य रहस्यों की गुत्थी सुलझाने में इसकी सम्भावनाएँ उजागर हों। संयोग अकसर कठिन परिश्रम से प्रखर हुए मस्तिष्कों में घटता है – व्याख्या पेश करके आगे का रास्ता दिखाता है। क्या आज आपने कुछ ऐसा देखा जो सामान्य नहीं था? उसका पीछा करते हुए क्या आपने एक बड़ी पहेली के कुछ अंश खोजे?

Note: Credits for the image used in the background of the article title: Fisherman with rod. URL: https://pixabay.com/en/fisherman-fishing-fishing-rod-man-1869288/. License: CC0.

नवोदिता जैन एक प्रशिक्षित कोशिका जीवविज्ञानी हैं। उनकी रुचि नवीनतम चिकित्सा में है और विज्ञान-लेखन के प्रति उनका रुझान है। वे 'इंडियाबायोसाइंस' से विज्ञान शिक्षा समन्वयक के बतौर जुड़ी हैं। नवोदिता से navodita@indiabioscience.org या navod12@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है

स्वागता घोष गोटेनबर्ग विश्वविद्यालय में एक विज़िटिंग रिसर्चर हैं। उनकी रुचि भारत की स्कूली शिक्षा की गुणवत्ता सुधारने और उच्च शिक्षा को बढ़ावा देने में है। उनसे swagathag.gu@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है

अनुवाद : मनोहर नोतानी **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय